ॐ सत्नाम साक्षी

उलटबांसी

नमः टेऊँरामाय ॐ नमः सर्वानन्दाय

सत्नाम साक्षी

उलटबांसी

प्रकाशकः

सत्गुरु स्वामी भगत प्रकाश जी महाराज व
श्री प्रेम प्रकाश मण्डल ट्रस्ट,
श्री अमरापुर स्थान, जयपुर

प्रथम संस्करण
प्रतियां : 1000

मूल्य: 20/-

93 वाँ चैत्र मेला, 2014
विक्रम सम्वत्-2071

प्रकाशक:
सत्गुरु स्वामी भगत प्रकाश जी महाराज व
श्री प्रेम प्रकाश मण्डल ट्रस्ट,
श्री अमरापुर स्थान, जयपुर

मुद्रक:
गणपति, जयपुर
मो.: 9828112907

भूमिका

सत्पुरुषों की अमृतमयी वाणी इस भव सागर से पार जाने के लिए नौका के समान है। संसार सागर के गहरे जल में डूबता उतराता यह जीव जब व्यथित होकर आर्तनाद करता है तब महापुरुषों की अमरवाणी उसे सम्बल प्रदान करती है उसी वाणी को श्रवण करते करते जब मनन करने की अवस्था में पहुंच जाता है तो उसे शान्ति और आनन्द का मार्ग मिल जाता है। दृढ़ निष्ठा, अटल विश्वास एवं अटूट श्रद्धा का पूर्णतः विकास होने पर स्वतः ही जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन होना प्रारम्भ होता है। क्रोध से अक्रोध की स्थिति, कामनापूर्ण हृदय से अकामनात्व की ओर, एवं स्वार्थपरता से निःस्वार्थता की स्थिति का अन्तरतम में निर्माण होता चला जाता है। अन्दर का स्वरूप बदलता जाता है। बाहर से शरीर वही रहता है परन्तु अन्तःकरण में शनैः शनैः निर्मलता का आविर्भाव होता है। पहले जो थोड़ी थोड़ी बात में बार-बार क्रोध, चिन्ता, भय, ईर्ष्या आदि विकार मन में जाग उठते थे अब वे विकार मन से दूर होने लगते हैं।

आचार्य सत्‌गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज की अमृतवाणी "श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ" सत्य की खोज करने वाले मानव मात्र के लिए अनमोल पथ प्रदर्शक है। सरल हिन्दी एवं सिन्धी भाषा में रचित यह अनुभवी वाणी सबके लिए सहज बोधगम्य है परन्तु कतिपय पद (भजन, दोहे, छन्द आदि) जो उलटबांसी या रहस्यमयी वाणी के रूप में लिखे गए हैं उनके अर्थ कुछ दुरूह हैं। गहरे आध्यात्मिक अर्थों वाली उस गूढ़वाणी के भावार्थ इस पुस्तक में प्रकाशित किए जा रहे हैं।

आशा है साधक जिज्ञासुगण इस अनमोल वाणी के गूढ़ार्थों को समझकर एवं अपने हृदय में उतारकर परम आनन्द की प्राप्ति की ओर अग्रसर होंगे।

प्रेम प्रकाश मण्डल
अमरापुर स्थान, जयपुर

।। राग रामकली भजन ।। १३ ।। २५।।

एक नगर मैं अद्भुत देखा जांकी चाल निराली रे ।।टेक।।
नीर बिना इक सागर देखा जांकी लहर कराली रे।
मच्छ कच्छ मांगर मछली तांमें सरिता जात उछाली रे।।१।।
पुरुष नपुंसक बांझ नारि को जन्मिया पूत सुचाली रे।
रूप न रङ्ग न अङ्ग उसीका सकल सृष्टि विस्ताली रे ।।२।।
बाँझ नपुंसक से सुत उपज्या शोभा जाहिं विशाली रे।
जन्मत मात पिता को मारे सारी सृष्टी घाली रे ।।३।।
बादल बिन तां वर्षा बरसे बिन रवि शशि उजियाली रे।
कहे टेऊँ जो यह पद बूझे सो जन होय सुखाली रे ।।४।।

आचार्य सद्गुरु टेऊँराम जी महाराज अपनी अमृतमय वाणी में फरमाते हैं मैंने एक अद्भुत नगर देखा जिसमें कई निराली अलौकिक बातें हैं:-

एक समुद्र है परन्तु उस समुद्र में नीर नहीं है लेकिन उसकी लहरें विकराल हैं उस समुद्र में बड़े बड़े जीव कच्छ (कछुए) - मच्छ (बड़ी मछलियां) है- मंमता अहंता की मनोवृत्तियां नदियों के समान मन में उछलती रहती हैं ।

संसार रूपी यह समुद्र है जिसे भव सिन्धु कहा गया है- इसमें बाहरी जल नहीं है परन्तु आसक्ति मोह रूपी जल की अनन्त राशि है-

संसार समुद्र–आसक्ति जल कामादिक जल जन्त।
भरम भंवर तांमे फिरे, सुख दुख लहर अनन्त।।

काम क्रोधादि विकार बड़े मच्छ कच्छ भयानक जल के जीव है। मोह के मन में प्रवेश होने से अनन्त काम क्रोधादि रिपु इस जीव को दुख देते हैं।

पुरुष नपुंसक बांझ नारि को जन्मिया पूत सुचाली रे।
रूप न रङ्ग न अङ्ग उसीका सकल सृष्टि विस्ताली रे ।।२।।

पुरूष नपुंसक अर्थात् ब्रह्म एवं बांझ नारि प्रकृति दोनों से संकल्प रूपी पुत्र उत्पन्न हुआ । बिना बाहरी रूप एवं रंग वाले इस संकल्प से समस्त सृष्टि उत्पन्न हुई।

एकोऽहं बहु स्यामः

ईश्वर ने संकल्प किया कि मैं एक से अनेक बन जाऊं

बाँझ नपुंसक से सुत उपज्या शोभा जाहिं विशाली रे।
जन्मत मात पिता को मारे सारी सृष्टी घाली रे ।।३।।

बांझ नपुसंक – मन है नपुसंक एवं बांझ है जिज्ञासा वृति– इनसे शोभावान ज्ञान रूपी पुत्र की उत्पत्ति हुई – ज्ञान होते ही मन सहित वृत्ति उस परब्रह्म में लीन हो गई।

जन्मत मात पिता को मारे .... निर्मल ज्ञान के उत्पन्न होने से मन के माता पिता दोनों की मृत्यु हो गयी। मन की माता है ममता, पिता है गर्व (अहंकार)। ज्ञान के उत्पन्न होने से मिथ्या ममता एवं मिथ्या अभिमान विनष्ट हो गए।

बादल बिन तां वर्षा बरसे बिन रवि शशि उजियाली रे।
कहे टेऊँ जो यह पद बूझे सो जन होय सुखाली रे ।।४।।

सहस्रार चक्र ब्रह्म रंध्र से अमृत की वर्षा होती है। योगीजन उस अमृत का पान करते हैं। बिना सूर्य चन्द्र के वहां दिव्य प्रकाश दृष्टिगोचर होता है। गुरु महाराज जी आखिरी पंक्ति में फरमातें हैं जो इस गूढ़ार्थ से भरे इस पद के अर्थ को समझ लेता है वो हमेशा सुखी रहता है।

****

।। राग रामकली भजन ।। २० ।। ३२।।

श्रवण देके सुनले साधो, अद्भुत ये इसरारा जी ।।टेक।।
इक चींटी ससुराल चली ले, संग में सखी अपारा जी।
फूंक मार उस रस्ते के सब, दिया उड़ाय पहाड़ा जी ।।१।।
उस चींटी ने नव मन अंजन, पाया नैन मंझारा जी।
ऊँची मंजिल चढ़ कर देखा, नज़र पड़े न अकारा जी ।।२।।
उस चींटी ने कोटी कुंचर, बान्धा निज चरनारा जी।
उन हाथियों को फैंक दिया ले,सागर के उस पारा जी ।।३।।
कहे टेऊँ उस चींटी संग मैं, पाया आनन्द भारा जी।
इस चींटी को सो जन पावे, जो है गुरु का प्यारा जी।।४।।

करुणासागर – कृपानिधान आचार्य सत्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज अपनी अमृतमयी वाणी में फरमाते हैं ।

हे साधो – (साधक – साधन करने वाले) एक अद्भुत आश्चर्यजनक दृश्य मैंने देखा जिसका वर्णन मैं आपको सुनाता हूं, ध्यान देकर श्रवण करिए –

<u>इक चींटी ससुराल चली ले संग में सखी अपारा जी (चींटी)</u>

ब्रह्ममयी मनोवृति – विवेक वृति – सद्वृति रूपी चींटी परमात्मा (ससुराल) की ओर चली अन्यान्य सद्वृतियां भी उसके साथ चलीं मार्ग में पड़ने वाले पहाड़ (रुकावटें, विघ्न) सांसारिक विषय विकारों की तरफ खींचने वाले संकल्प विकल्पादि (पहाड़ों) को उसने अहंब्रह्म की फूक लगाके उड़ा दिया। अर्थात् ईश्वर के ध्यान में मगन होते ही सांसारिक तृष्णाओं – राग द्वेषादि का विनाश हो गया।

उस चींटी ने नव मन अंजन पाया नैन मंझारा जी – नौ द्वार (दो आंख–दो कान – दो नाक, मुख, उपस्थ गुदा) के विषयों देखने सुनने सूंघने रस लेने एवं विषय विलास से विरक्ति रूपी अंजन (सुरमा) अपनी आंखों में डाला है। अर्थात् इन्द्रियों के समस्त विषयों से उपरामता का काजल धारण किया है।

सर्वकर्माणि मनसा सन्न्यस्यास्ते सुखं वशी।

नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन्।।5/13।।

ऊंची मंजिल चढ़कर देखा नज़र पड़े न अकारा जी

ऊँची मंजिल – अपने सत्स्वरूप के ध्यान में स्थित होकर देखा तो इस प्रंपचात्मक दृश्य जगत का अस्तित्व न रहा –

उस चींटी ने कोटी कुंचर, बान्धा निज चरनारा जी। ....

ब्रह्ममयी सद्वृति ने समस्त विषयात्मक असद्वृत्तियों रूपी हाथियों को अपने चरनों में बांध लिया – अर्थात् असद्वृतियों को समाप्त कर दिया – सागर के उस पार फेंकना – अर्थात् सदा सर्वदा के लिए उन असद्विचारों को अपने से बहुत दूर कर दिया ।

परम श्रद्धेय आचार्य जी फरमाते हैं कि उस (कहे टेऊँ...... प्यारा जी) ब्रह्ममयी मनोवृति के साथ मैंने उस परम आनन्द को प्राप्त किया – जिसका कभी लोप नहीं होता – सदा सर्वदा उस आनन्द सिन्धु में निमग्न हो गया – इस परमात्मा परक सत्य विवेक वृत्ति को वही पा सकता है जिसने अपना मन गुरु चरणों में लगा दिया हो – गुरु के वचनों से जिसने प्यार किया हो अर्थात् उनके वचनामृत, उपदेशामृत के अनुसार जिसने अपना जीवन ढाल लिया हो।

****

।। राग प्रभाती भजन ।। १० ।। ४२।।

अजब अजायब कुदरत हमको, सद्गुरु देव लखाई।
इस कुदरत को जो जन जाने, सो मेरा गुरु भाई ।।टेक।।
स्वास मास बिन पंछी पिंजरे, देखत रहत उदासी।
फूटे पिंजर नहिं कहँ जावे, अचल रहे अविनासी ।।१।।
एक वृक्ष पर सम दो पंछी, नाम काम भिन्न जांके।
ऊठत समय एक हो जाते, भेद मिटत सब तांके ।।२।।
ऊपर मूल डार है नीचे, तरुवर एक अनूपा।
तामें नित इक पंछी खेलत, धरके तीन स्वरूपा ।।३।।
एक बाग में चार वृक्ष हैं, तां पर पंछी एका।
वृक्ष वृक्ष पर भिन्न-भिन्न वपु धर, करते केल अनेका ।।४।।
कहे टेऊँ बिन पर इक पंछी, आत जात नभ माहीं।
पांच नाम धर पांच काम कर, देखत नैन न ताहीं।। ५।।

परम आराध्य, परम श्रद्धेय - आचार्य सत्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज अपने अमृत तुल्य वचनों में फरमाते हैं कि श्री सत्गुरुदेव जी ने मुझे एक अजब अलौकिक आश्चर्य चकित करने वाली कुदरत का ज्ञान कराया यह जीवात्मा रूपी पंछी ऐसा है जिसमें ना स्वास है न मास है। यह पंछी शरीर रूपी पिंजरे में रहता है और अपने स्वरूप का अज्ञान होने से नाना प्रकार के दुखों को सहता हुआ उदास दुखी रहता है। और इस शरीर रूपी पिंजरे के नाश होने के बाद भी कहीं जाता नहीं। क्योंकि उसमें आना जाना नहीं .... ?

आतम अविनाशी अचल जग तांते प्रतिकूल ।
ऐसो ज्ञान विवेक है, सब साधन को मूल।।

वह अचल है- अर्थात् चलायमान नहीं है और अविनाशी है उसका तीनों कालों में नाश नहीं होता है।

एक वृक्ष पर सम दो पंछी नाम काम भिन्न जांके -

इस शरीर रुपी वृक्ष पर परमात्मा एवं जीवात्मा दोनों का निवास है।

ईश्वर सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्ररूढानि मायया ।।१८/६१।।

दोनों के नाम और काम अलग हैं - एक पंछी केवल साक्षी बनकर देखता रहता है। दूसरा अनन्त कर्म करता है। मायाबद्ध जीवकर्त्ता बनकर अनन्त कर्म करता रहता है - ईश्वर साक्षी दृष्टा बनकर देखता है ।

ऊठत समय एक हो जाते, भेद मिटत सब तांके

गुरुदेव से ज्ञान प्राप्त करके मोहमाया बद्ध जीव जब अविद्या निन्द्रा से जाग जाता है तो यह जीव परमात्मस्वरूप हो जाता है।

आत्मा से परमात्मा जुदा भए बहु काल।
सुन्दर मेला तब हुआ सतगुरु मिला दलाल।।

ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति - (जानत तुमहिं तुमहिं होइ जाई) अविद्या निन्द्रा से जागने पर दोनों एक हो जाते हैं।

ऊपर मूल डार है नीचे, तरुवर एक अनूपा।

यह शरीर रूपी उल्टा वृक्ष है - जिसकी जड़ ऊपर है - शाखा टहनी फल फूल नीचे हैं। जिसकी संसार के अन्याय वृक्षों से

उपमा नहीं की जा सकती, अनुपमेय है। उसमें जीवात्मा रूपी पंछी निवास करता है-तीन स्वरूप धारण करके अपनी लीला करता है।

स्थूल सूक्ष्म और कारण ये तीन शरीर हैं तीनों शरीरों में विश्व तेजस प्राज्ञ संज्ञा धारण करके यह जीवात्मा रूपी पंछी अपनी लीला करता है।

एक बाग में चार वृक्ष हैं, तां पर पंछी एका।
वृक्ष वृक्ष पर भिन्न-भिन्न वपु धर, करते केल अनेका ।।४।।

इस शरीर रूपी बाग में चार वृक्ष हैं :-

1) जाग्रत 2)स्वपन 3)सुषुप्ति 4)तुरिया

इन चारों अवस्थाओं रूपी वृक्षों पर जीवात्मा रूपी पंछी अलग अलग रूप धारण करके अनन्त खेल खेलता है।

जग्रत में जोई, सुपने में सोई।
सुम्हें सुषोपति सेज ते करे आनन्द उह्रोई।
तुरिया में तद् रूप थी साख दि़ए सोई।
आतम उह्रोई-जो चइनी खे चेतन करे।।(सामी साहब)

सत्गुरु महाराज जी ने प्रेम प्रकाश ग्रन्थ की अमृतमयी वाणी में लिखा है :-

पूरण धर विश्वास, गुरुमुख गुरु के वचन में ।।टेक।।
साक्षी चेतन रूप तुम्हारा, चारों वस्था माहिं प्यारा।
खेलत बारह मास, जैसे भूप भवन में ।।१।।

।। राग पहाड़ी भजन ।। ३५ ।। ६८३।।

अन्तिम पंक्ति में सत्गुरु महाराज जी फरमाते हैं एक पंछी जिसके पंख नहीं है वह ऊपर नभ आकाश में बिना पंखों के आता जाता है ।

कहे टेऊँ बिन पर इक पंछी, आत जात नभ माहीं।
पांच नाम धर पांच काम कर, देखत नैन न ताहीं।।

उसके पांच नाम है –

1. प्राण 2. अपान 3. समान 4. व्यान 5. उदान

ये पंच प्राण हैं और पांच प्राणों के अलग – अलग पांच निम्न प्रकार के कार्य हैं –

क्र.	नाम	वास स्थान	देवता	कार्य
1.	प्राण	हृदय	ईशान	क्षुधा तृषा लगाना 21600 स्वास लेना
2.	अपान	गुदा	घोर	मल मूत्र त्याग
3.	समान	नाभि	वामदेव	खाए पिए अन्न को सम करना
4.	उदान	कण्ठ	तत्पुरुष	अन्न का विभाग करना स्वपन रचना में सहायक सूक्ष्म शरीर को एक शरीर से दूसरे में ले जाना
5.	व्यान	सर्वांग	सद्योजात	नाड़ी नाड़ी में रस पहुंचाना सारे शरीर की संधियों को मोड़ना

इन पंच प्राणों को आंखों से देखा नहीं जा सकता है ।

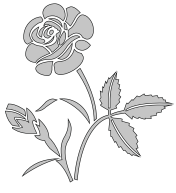

।। राग आसा भजन ।। ८० ।। १४२।।

सुनो रे साधो सुनो रे सन्तो देखा मैं इसरार जी,
जो जन इस का मर्म पछाने तां पर मैं बलिहार जी,
कहते साच हैं ।। टेक।।

अद्‌भुत वृक्ष अनोखा जामें छोटी मोटी शाख घनी।
मूल गगन है जांकी टहनी इधर उधर बहु लाख तनी।
तांके मेवे बहुत रसाले खावत क्षुधा खाक बनी।
ऐसे तरुवर की छाया को चाहत देव उदार जी ।।१।।

एक भवन दो सुरभी देखी इक छोटी इक आली है।
छोटी का रङ्ग धवल मनोहर मोटी रंग की काली है।
छोटी का है दूध रसीला पीवत उत्तम मराली है।
दूध बड़ी का पीवन वाला भ्रमत बारम्बार जी ।।२।।

पुरुष अरूपी सुन्न से गिरिया नभपुत्री तां झपट लिया।
चतुर भांति के वस्तर पहने एक एक ने ताहिं दिया।
पीछे बन गये रूप अनेका देख देख खुश होय जिया।
ब्रह्म पुत्र वह पुरुष बताकर दिखलाया निज सार जी ।।३।।

एक महल अति अद्‌भुत ऊँचा नैन बिना सो दृष्टि पड़े।
कैसे बनिया किसहिं बनाया अन्त न आवत वेद ररे।
भीतर जावे लौट न आवे नागा को प्रवेश करे।
कहे टेऊँ सो नागा होवे गुरु कृपा जिहँ धार जी ।।४।।

परम आराध्य आचार्य सद्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज फरमाते हैं – हे सन्तो हे साधो ध्यान देकर श्रवण करिए – मैंने एक अद्भुत आश्चर्यजनक इसरार देखा है जो इसका वास्तविक अर्थ समझेंगे – उन पर मैं बलिहार जाऊं

अद्भुत वृक्ष अनोखा जामें छोटी मोटी शाख घनी।
मूल गगन है जांकी टहनी इधर उधर बहु लाख तनी।
तांके मेवे बहुत रसाले खावत क्षुधा खाक बनी।
ऐसे तरुवर की छाया को चाहत देव उदार जी ।।१।।

यह मनुष्य शरीर रूपी अद्भुत अनोखा वृक्ष है – जिसमें छोटी मोटी अनन्त शाखाएं हैं – शरीर की कर्मेन्द्रियां उसकी शाखाएं हैं – जिस वृक्ष का मूल – अर्थात् जड़ ऊपर है – और शाखाएं नीचे की ओर हैं – लाखों नसें नाड़ियां इस शरीर रूपी वृक्ष में व्याप्त हैं ।इस मनुष्य शरीर के द्वारा ही शाश्वत शान्ति और मुक्ति रूपी मेवों की (फलों की) प्राप्ति होती है अर्थात् मनुष्य शरीर मोक्ष प्राप्ति का साधन है।

साधन धाम मोक्ष कर द्वारा, पाय न जिंह परलोक संवारा।।

अनन्त जन्म जन्मान्तर से क्षुधित जीव जब मुक्ति शान्ति के फलों का सेवन करता है तो उसकी क्षुधा सदा के लिए निवृत हो जाती है–ऐसे वृक्ष की छाया को देवतागण भी चाहते हैं।

नरतनसम नहि कवनउ देही, जीव चराचर जाचत जेही।
बड़े भाग मानुष तन पावा, सुर दुर्लभ सद्ग्रन्थनि गावा।।

देवता भी मनुष्य शरीर को चाहते हैं – क्यों कि इसी शरीर के द्वारा ही मोक्ष मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।

एक भवन दो सुरभी देखी इक छोटी इक आली है।
छोटी का रङ्ग धवल मनोहर मोटी रंग की काली है।
छोटी का है दूध रसीला पीवत उत्तम मराली है।
दूध बड़ी का पीवन वाला भ्रमत बारम्बार जी ।।२।।

इस मनुष्य के अन्तर्मन में दो प्रकार की प्रवृत्तियां निवास करती हैं एक सद्प्रवृति दूसरी कुप्रवृति – (एक सद्बुद्धि सुमति दूसरी कुबुद्धि कुमति) एक अन्तर्मुख वृत्ति जो अन्तर में बैठे उस परमात्व तत्त्व की ओर ले जाती है। दूसरी बहिर्मुख वृत्ति जो बाह्य विषय सुख आदि की तरफ ले जाती है–

सद्वृति श्वेतवर्ण गौ के समान है – असद्वृति श्यामवर्ण गौ के समान है। सफेद शुभ वर्ण शान्ति मुक्ति आनन्द प्रकाश का प्रतीक है। काला वर्ण तम अन्धकार – अशान्ति, बन्धन का प्रतीक है।

सद्प्रवृतियों को धारण करने वाले को रस रूप आनन्द–स्वरुप (रसौ वै सः) की प्राप्ति होती है और असद्प्रवृतियों को धारण करने वाला बारम्बार जन्म मृत्यु रूप आवागमन को प्राप्त होता है।

पुरुष अरूपी सुन्न से गिरिया नभपुत्री तां झपट लिया।
चतुर भांति के वस्तर पहने एक एक ने ताहिं दिया।
पीछे बन गये रूप अनेका देख देख खुश होय जिया।
ब्रह्म पुत्र वह पुरुष बताकर दिखलाया निज सार जी ।।३।।

अरूप अगम अगोचर परिपूर्ण ब्रह्म जो पहले एक था, एक

से अनेक हुआ – एकोऽहं बहु स्यामः – (मैं एक हूं–एक से अनेक बन जाऊं, उसके संकल्प से सृष्टि उत्पन्न हुई–प्रकृति रूपी नभ पुत्री क्यों कि प्रकृति पुरुषाधीन है) उस प्रकृति ने ईश्वर के संकल्प को झपट लिया – अर्थात् प्रकृति के द्वारा उस संकल्प के अनुसार चार खानियों में विभक्त- (स्वेद्ज, उद्भुज–अंडज जेरज) सृष्टि की रचना हुई (चतुर वस्तर) फिर उन चार खानियों में अनेक रूपात्मक चौरासी लाख योनियां सृजित हुई ।

ब्रह्म पुत्र अर्थात् सद्गुरुदेव ने उस पुरुष अर्थात् परमात्म तत्व को लखाकर सब सार – सत्य स्वरूप का दर्शन करा दिया।

एक महल अति अद्भुत ऊँचा नैन बिना सो दृष्टि पड़े।
कैसे बनिया किसहिं बनाया अन्त न आवत वेद रे।
भीतर जावे लौट न आवे नागा को प्रवेश करे।
कहे टेऊँ सो नागा होवे गुरु कृपा जिहँ धार जी ।।४।।

आत्म स्वरूप रूपी महल अद्भुत अनोखा और ऊँचा अर्थात् इस मायिक जगत से बहुत श्रेष्ठ सर्वोपरि है। वह आत्मा अनादि है अविनाशी है उसकी महिमा का कोई अन्त नहीं है ऐसा वेद पुराण वर्णन करते हैं – वहां तक जिसकी पहुंच हो जाती है उसे फिर जन्म मृत्यु के बन्धन में नहीं आना पड़ता । वहां नागा अर्थात् निर अभिमानी ही प्रवेश कर सकता है – जिसके ऊपर गुरुदेव की महत्ती कृपा होती है वही अभिमान–आसक्ति से छूट सकता है।

।। राग आसा भजन ।। ८१ ।। १४३।।

सद्गुरु मैंनूं कृपा करके दिखलाया इसरार जी।
आंखों देखा भूलत नाहीं याद रहत हरवार जी,
धन्य धन्य गुरुदेव ।। टेक।।
इक दिन मुड़दों की नगरी में मुझको ले गुरुदेव गये।
ब्रह्मपुत्र की मुरली सुनकर सारे मुड़दे ज़िन्दह भये।
कबरों से उठ बाहर आये नाचन में मन खूब दये।
नाचत नाचत उड़ गये नभ में बन गये अफुर अकार जी ।।१।।
एक दिवस शुभ रम्य बगीचा दिखलाने गुरुदेव चले।
सुगन्ध प्यासे वहां और भी आकर बैठे पुरुष भले।
पवन वेग के छूने से ही सबके गिर गये सीस तले।
और सीस धर ताहिं जिलाया लूटत आनन्द सार जी ।।२।।
एक दिवस गुरु भारी बन को बड़े ज़ोर से फूंक दयी।
भिन्न भिन्न वृक्षों की बहु पंक्ती जल कर भस्मी भूत भयी।
उस भस्मी में एक अनोखी जगमग ज्योती देख लयी।
देखत देखत उस ज्योती में मिल गयी भस्म अम्बार जी।।३।।
कहे टेऊँ गुर डोरी लेके सूर चान्द को बान्ध लिया।
महा अचल की ऊँच शिखर पर तिनहूँ को ठहराय दिया।
बादल बिन वहँ अमृत बरसे रज रज मुख रे ताहिं पिया।
पी पीकर गुरु मोहि पिलाया अमर भया निरधार जी ।।४।।

आचार्य सत्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज जी अपनी अमृतवाणी में सदुपदेश देते हैं कि गुरुदेव ने कृपा करके अद्भुत दृश्य मुझे दिखलाया। मैंने अपनी आंखों से जो प्रत्यक्ष देखा उसे भूल नहीं सकता हूं – हमेशा वो मुझे याद रहता है – गुरुदेव धन्य हैं

जिन्होंने कृपा कर मुझे यह रोमांचक दृश्य दिखलाया।

एक दिन सत्गुरु महाराज जी मुझे एक नगरी में ले गए जो मुर्दों की नगरी थी – मन की सांसारिक मनोवृत्तियां जो दिन रात विषय लालसा की तरफ भागती है वे मुर्दों के समान हैं।

ब्रह्म पुत्र – अर्थात् गुरु शब्द की मुरली सुनकर वे सारी मनोवृत्तियां जो शब्द स्पर्शादि के पीछे भागती थीं उनमें जान आ गयी चेतनता आ गयी।वो वृत्तियां ईश्वर परक हो गयीं – जैसे मुर्दे कब्रों से बाहर आ जाएं। वैसे जन्म जन्मान्तर से मृत पड़ी मनोवृत्तियां – ईश्वर प्रेम के आनन्द में मगन होकर नृत्य करने लगी। वो सद्वृत्तियां ईश्वर के ध्यान में मगन होकर शनैः शनैः ईश्वर में लीन हो गयी।

न तत्र मनो याति ....।।

एक दिवस शुभ रम्य बगीचा दिखलाने गुरुदेव चले।
सुगन्ध प्यासे वहां और भी आकर बैठे पुरुष भले ।।

एक दिन पूज्य सत्गुरुदेव शुभ रमणीक सुन्दर उद्यान में ले गए। वह सत्संग रूपी सुन्दर बगीचा जहां पर अन्य सत्संगी जो शुभगुणों की सुगन्ध के प्यासे थे वे भी सत्संग में आकर सम्मिलित हुए।

पवन वेग के छूने से ही सबके गिर गये सीस तले।
और सीस धर ताहिं जिलाया लूटत आनन्द सार जी ।।

जैसे उद्यान में पुष्पों के संसर्ग से बहने वाली वायु सुगन्धित हो जाती है–वैसे सत्पुरुषों की अमृतमयी वाणी का श्रवण मनन करके जिज्ञासु सत्संगियों के देहाभियान रूपी सिर नीचे गिर गए –

देहाभिमान अशुद्ध अहंकार है और अपने आत्मस्वरूप ब्रह्म स्वरूप का आभास शुद्ध अहंकार है। सत्पुरुषों की सत्वाणी से अशुद्ध अहंकार (मलिन अहंकार) रूपी सिर गिर गए फिर गुरुदेव ने अहं ब्रह्मास्मि रूपी शुद्ध अहंकार रूपी सिर लगाकर जिज्ञासु को परम शुद्ध जीवन प्रदान किया। उस शुद्ध बुद्ध ब्रह्म स्वरूप को प्राप्त करके यह जीव सत्चित् आनन्द मयी हो जाता है परमानन्द की प्राप्ति करता है।

एक दिवस गुरु भारी बन को बड़े ज़ोर से फूंक दयी।
भिन्न भिन्न वृक्षों की बहु पंक्ती जल कर भस्मी भूत भयी।

एक दिन करुणामय गुरुदेव एक जंगल में ले गए जहां अनन्त वृक्षों की पंक्तियां थी। मन के अन्दर असंख्य वृतियां जो विषयपरक एवं क्षण-भन्गुर सुख की खोज में लगी रहती हैं वो जंगली वृक्षों के समान हैं -

सत्गुरुदेव के शब्द रूपी फूंक से सारी सांसारिक मनोवृति रूपी वृक्षों की पंक्तियां जलकर भस्मी भूत हो गई। गुरु शब्द का जाप करने से मन शान्त हो गया।

सत्गुरु मन ठारियो-तत्तो कोटि जन्म जो।
दीयो बारे घर में सो ठाकुर देखारियो।
सामी निवारियो-अविद्या रोगु अन्दर जो।।

जाप करते करते मन के संकल्प विकल्प मिटने लगे-सांसारिक संकल्पों के नाश होने से अन्तर में ज्ञान की ज्योति जगी, उस ज्ञान ज्योति में सब सांसारिक प्रपंच विलीन हो गया।

कहे टेऊँ गुर डोरी लेके सूर चान्द को बान्ध लिया।
महा अचल की ऊँच शिखर पर तिनहूँ को ठहराय दिया।
बादल बिन वहँ अमृत बरसे रज रज मुख रे ताहिं पिया।
पी पीकर गुरु मोहि पिलाया अमर भया निरधार जी ।।४।।

सत्गुरु महाराज जी फरमाते हैं कि सद्गुरुदेव जी ने डोरी लेकर सूर्य और चन्द्रमा को बांध लिया। अर्थात् शब्द रूपी डोरी से सूर्य चन्द्र - ईड़ा पिंगला नाड़ी-से, स्वासों के साथ नाम का अभ्यास करते करते प्राणायाम द्वारा स्वासों को ऊपर सहस्रार चक्र तक पहुंचा दिया। सद्गुरुदेव ने दशमद्वार से बहने वाली अजस्र अमृत धारा का पान कराया। बिना बादलों के बरसने वाले अमृत को पीकर तृप्त हुआ - सद्गुरु देव की अनन्त कृपा से उस अमृत रस को पीकर मैंने अमरता को प्राप्त किया।

****

।। राग भैरवी भजन ।। ४२ ।। २५७।।

यह झूठा है संसारा, क्यों लपटे ताहिं गंवारा ।।टेक।।
ज्यों धात्री सुतनि सुनाया, अनहोता प्रसंग गाया।
तां सुन सुन सुत हर्षाया, ना तरु सर नगरी दारा ।।१।।
जिमि चाकर घट सिर चाया, बहु मन में ठाठ बनाया।
खुश होके सीस हिलाया, घट गिरते रोया भारा ।।२।।
ज्यों मंगता इक दिन सोया, सोते ही स्वपना जोया।
बहु सम्पति राज अलोया, जब जागे फिर पेनारा ।।३।।
ज्यों सर्प रज्जू में भासे, पुनि रजत सीप प्रकासे।
जग तैसे ब्रह्म विभासे, यह वेदों का वीचारा ।।४।।

जग सारा कल्पित मानो, सत् आतम को पहिचानो।
कहे टेऊँ आतम जानो, तज कल्पित जगत असारा ।।५।।

परम आराध्य आचार्य सद्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज फरमाते हैं कि यह जगत मिथ्या है - इस मिथ्या जगत से प्रीत करने वाले अज्ञानी हैं।

जिस प्रकार से माता पुत्रों को शयन कराते समय नाना प्रकार की कल्पित कथा कहानियां सुनाती हैं - राजाओं की कथाएं, पर्वत जंगलों नदियों तालाबों की कहानियां सुनाकर बालकों का मन बहलाती हैं-ये कथाएं काल्पनिक होती हैं लेकिन उन्हें सुन सुनकर बालक हर्षित होते हैं जिस प्रकार उन कथाओं कहानियों के पात्र घटनाएं काल्पनिक होती हैं उसी प्रकार से इस जगत का भी सत्य अस्तित्व नहीं है।

एक चाकर (नौकर) सिर पर घी से भरा हुआ घड़ा लेकर जा रहा था और मार्ग में चलते चलते नाना प्रकार की सुखद कल्पनाएं करता जा रहा था। अपने जीवन में सुख सुविधाएं प्राप्त करने की काल्पनिक बातें सोचता जा रहा था मेरा अपना मकान होगा-दुकान होगा, धन का अम्बार होगा-मोटर गाड़ियां नौकर चाकर सब मेरे पास होंगे।

कल्पनाओं का सुखद संसार रचकर आनन्द में मगन हो चलते चलते नृत्य की मुद्रा में नाचने लगा सिर हिलाते ही सिर पर घी से भरा हुआ घड़ा नीचे गिर कर टूट गया - घी बिखर गया - और वह गरीब नौकर अपना नुकसान होता देखकर व्याकुल

होकर रोने लगा - काल्पनिक पदार्थ और सुख सुविधा के साधन तो उसे मिले नहीं परन्तु जो कुछ थोड़ा बहुत उसके पास था - वह भी उसका नष्ट हो गया - इसी प्रकार इस मिथ्या जगत से बड़ी बड़ी आशाएं लगाकर यह जीव आगे की सुखद कल्पनाएं करते करते - जो उसके पास श्वासों की सम्पति है - उसे भी उन मिथ्या कल्पनाओं में गंवा देता है।

जैसे एक दरिद्र भिखारी ने एक दिन नींद में सोते समय एक स्वप्न देखा कि मेरे पास राजपाट एवं अथाह सम्पत्ति का भण्डार है।

सुपने में कंगालु, राजा थ्यो कहिं देश जो।
हाथी घोड़ा पालकियूं, मेड़याईं सभु माल।।
दर ते बीठा केतिरा, सामी करिनि सुवाल।
जागिए उहो हालु, पिनन्दो वते पंज कणां।।

सुपने में नाना प्रकार के सुख भोग के साधन देखकर बड़ा प्रसन्न होता है- लेकिन जब निद्रा से जागता है तो वह स्वप्न का वैभव समाप्त हो जाता है और अपनी पुरानी भिखारी की दशा में वह भिखारी लौट आता है -

सपनें होइ भिखारि नृपु, रंकु नाकपति होइ।
जागें लाभुन हानि कछु, तिमि प्रपंच जियं जोइ।।

इसी प्रकार से जगत के नाना पदार्थों को प्राप्त कर यह जीव क्षण-भन्गुर सुख में लीन रहता है और शरीर से जीवात्म के अलग होने के बाद उन संसार, संसार के सम्बन्धों एवं संसार के पदार्थों से सम्बन्ध टूट जाता है।

जैसे स्वप्न के पदार्थों का जाग्रत में अस्तित्व नहीं रहता वैसे ही संसार के पदार्थों एवं सम्बन्धों का भी शरीर से अलग होने के बाद सम्बन्ध नहीं रहता – स्वप्न में अत्यन्त आनन्द प्राप्त करने वाला दरिद्र, जाग्रत अवस्था में आने पर पुनः उसी दरिद्रावस्था को प्राप्त हो जाता है।

यह संसार असत्य होते हुए भी सत्य भासता है। जैसे शाम के धुंधलके समय में मार्ग में पड़ी हुई रस्सी, सर्प के सदृश भासती है। वास्तव में वहां सर्प नहीं लेकिन प्रकाश की कमी के कारण रज्जु अर्थात रस्सी में सर्प का भ्रम होता है एवं सीप दूर से प्रकाश में चांदी जैसी चमकती है उसमें चांदी का भ्रम होता है उसी प्रकार से दृश्यमान संसार सत्य भासता है। मिथ्या असत् होते हुए भी सत्य भासता है। जो परिपूर्ण परब्रह्म सत्य स्वरूप है वह दीखता नहीं और जो असत् जड़ दुख रूप है वो सत्य प्रतीत होता है। दृष्टिभ्रम, मतिभ्रम के कारण ऐसा होता है। यही वेदों की वाणी भी कहती है।

भजन की आखिरी पंक्ति में परम पूज्य सद्‌गुरुदेव फरमाते हैं – यह सारा संसार कल्पित है, वास्तव में उसकी कोई सत्ता नहीं–जो पहले नहीं था बाद में भी रहने वाला नहीं केवल बीच में दिखलाई पड़ता है वो नाशवान है मिथ्या है–और जो पहले भी था–बाद में भी रहने वाला है, भूत भविष्य वर्तमान में जिसका सदा ही अस्तित्व है वह आत्म स्वरूप सत् है। गुरुदेव कहते हैं उस अपने आत्म स्वरूप को जानो – इस कल्पित और असार – जगत से अपने मन की वृत्ति हटाकर – अपने आतम स्वरूप को जानकर–परम आनन्द की प्राप्ति करो।

****

।। राग भैरवी भजन ।। ६४ ।। २७९।।

यह झूठा जगत विलासा, कहते आवे हासा ।।टेक।।
ससे सींग का धनुष उठाके, पूत नपूंसक चलिया।
बांझ पूत से झगड़ा करके, लीना राज अकासा ।।१।।
बादल केरी मधुर मिठाई, पड़ी गगन के कोठे।
खाने कारण चींटी चाली, शिर पर ले कैलासा ।।२।।
मुड़दों की इक मण्डली सुन्दर, अर्ध गगन में नाचे।
देख देख तिहँ अन्धा हर्षे, मूक कहत इतिहासा ।।३।।
कहे टेऊँ गुरुदेव लखाया, रूप जगत का ऐसा।
ज्ञान दृष्टि से ब्रह्म प्रकाशे, अविद्या से जग भासा ।।४।।

आचार्य सद्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज अपनी अमृतवाणी में सदुपदेश देते हैं कि यह संसार मिथ्या है – असत् है– फिर भी अनन्त जीव उसे सत्य समझकर दिन रात उनके पीछे लगे हुए हैं । यह बड़ी ही विचित्र स्थिति है – इस स्थिति का वर्णन करते–सांसारिक जीवों की अज्ञानमयी मूर्खता पर हंसी आती है।

यह संसार कैसे असत् है – इस प्रसंग पर नाना दृष्टान्त देकर सत्गुरु महाराज जी समझाते है कि जिस प्रकार से नीचे वर्णित वस्तुओं का कोई अस्तित्व नहीं उसी प्रकार से संसार का भी अस्तित्व नहीं है। जिस प्रकार ससे (खरगोश) को कभी सींग नहीं होते–उन अनहोते सींगों का धनुष बनाकर पूत........

नपुसंक – जिसमें सन्तान उत्पन्न करने की क्षमता नहीं – उस नपुंसक का पुत्र – उस धनुष को लेकर चला उसने बांझ (जो सन्तान उत्पन्न न कर सके, वन्ध्या स्त्री) के पुत्र से युद्ध करके –आकाश में स्थित राज्य को प्राप्त कर लिया।

कहने का अर्थ यह है कि जिस प्रकार से खरगोश के सींग नहीं होते। बांझ स्त्री एवं नपुंसक पुरुष के पुत्र नहीं होते आकाश में कोई देश शहर या राज्य नहीं होते सब मिथ्या कल्पनाएं हैं उसी प्रकार से संसार भी झूठा मिथ्या है ।

दूसरी पंक्ति में अन्य असम्भव कल्पनाओं का उदाहरण देकर सत्गुरु महाराज जी–समझाते हैं बादलों की मधुर मिठाई–आकाश में स्थित भवन में रखी हुई है उसे खाने के लिए एक चींटी, विशाल कैलाश पर्वत को सिर पर रखकर आकाश चली तो जैसे बादल जो हवा पानी का पुञ्ज है उनसे मिठाई बन नहीं सकती। आकाश में भवन हो नहीं सकता एवं चींटी अपने सिर पर कैलाश पर्वत उठा नहीं सकती न आकाश में गमन कर सकती है, जैसे ये सब कल्पनाएं मिथ्या हैं उसी प्रकार से संसार भी मिथ्या है।

तीसरी पंक्ति में श्री गुरुदेव द्वारा बताया गया कि मुर्दों शवों की एक सुन्दर मण्डली आकाश मण्डल के बीचों बीच –नृत्य करने लगी उन मुर्दों की मण्डली को देखकर अन्धा प्रज्ञाचक्षु बहुत हर्षित होता है एवं गूंगा–इस इतिहास को बताता है– ये सब बातें जिस तरह से असम्भव हैं उसी प्रकार से संसार जगत का अस्तित्व भी असंभव है।

आखिरी पंक्ति में श्री गुरु महाराज जी फर्मातें हैं कि गुरुदेव ने कृपा करके अनंत दृष्टांतों के माध्यम से जगत के उस असत् स्वरूप का ज्ञान कराया–गुरुदेव के ज्ञान को जिसने हृदयंगम कर लिया उसे सबमें ब्रह्मस्वरूप ही भासता है–लेकिन जो अभी तक अज्ञानावस्था में है–उसे संसार सत्य दिखलाई पड़ता है।

****

।। राग भैरवी भजन ।। ६५ ।। २८०।।

यह साधो शंक हमारी, उत्तर देहि विचारी ।।टेक।।

एक नारि के तीन पुत्र हैं, ताँकी बहु कन्याएँ।
आपस में नित झगड़ा करती, किसकी हो जयकारी ।।१।।
पुरुष नपूंसक नारि बांझ को, उभय रूप सुत जमिया।
हाथ पांव बिन कहो कौन जो, जीते सृष्टी सारी ।।२।।
एक पुरुष को बहुत कुटुम्ब है, तीन लोक में छाए।
कहे टेऊँ सुत कौन उसीमें, जिहं निज जाति संहारी ।।३।।

उपर्युक्त भजन में सत्‌गुरु महाराज जी फरमाते हैं कि हे साधो-साधक-विचार शक्ति को बढ़ाकर मेरी इस शंका का उत्तर दो :-

एक नारि के तीन पुत्र हैं, ताँकी बहु कन्याएँ।
आपस में नित झगड़ा करती, किसकी हो जयकारी ।।

नारि - माया प्रकृति

माया के तीन पुत्र है

1)सत्त्वगुण 2)रजोगुण 3)तमोगुण

मन के अन्दर कभी सात्विक विचार धाराएं कभी राजसी विचारधाराएं एवं कभी तामसी विचारधाराएं चलती हैं -

सात्विक राजसी एवं तामसी मनोवृतियां ये तीनों गुण से उत्पन्न हुई उन गुणों की कन्याएं हैं - कभी सात्विक वृत्ति प्रबल कभी राजसी कभी तामसी वृत्ति प्रबल होती हैं - सात्त्विक वृति में पूजा पाठ आराधना ईश्वराधन आदि क्रियाएं - राजसी में

सांसारिक सुख विषय भोग की लालसाएं – तामसी में अहंकार, मोह आदि की प्रबल वृतियां जागती हैं इन सब में नित्य झगड़ा होता रहता है कि कौन बड़ा है किसकी जय होगी।

पुरुष नपूंसक नारि बांझ को, उभय रूप सुत जमिया।
हाथ पांव बिन कहो कौन जो, जीते सृष्टी सारी ।।

पुरुष नपुंसक – अर्थात् निर्गुण निर्विशेष निराकार ब्रह्म के संकल्प से बांझ नारि अर्थात् प्रकृति (माया) जो बांझ है जड़ है अपनी शक्ति उसमें नहीं, ईश्वर की शक्ति पाकर माया सृष्टि के खेल करती है – इनका पुत्र है

मन –

हिन मन सां तुहिंजो छाहे,
मनु माया जी वथु आहे।
गो गोचर जहं लग मन जाई।
सो सब माया जानहुँ भाई।।

उभय रूप – मन के दो रूप हैं

1. मलिन मन 2. शुद्ध मन

मलिन मन बन्धन में डालने वाला है

शुद्ध मन मुक्ति दिलाने वाला है

"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः"

तो दोनों मन के रूप हैं :–

बिना हाथ पांव के मन के अंग आकार नहीं है लेकिन सारी सृष्टि पर मन का राज्य चलता है ।

एक पुरुष को बहुत कुटुम्ब है, तीन लोक में छाए।
कहे टेऊँ सुत कौन उसीमें, जिहं निज जाति संहारी ।।

मन रूपी पुरुष का बहुत बड़ा कुटम्ब है - माता-ममता, पिता-गर्व, नारि-तृष्णा, बेटे-पांच विकार अनन्त मनोवृत्तियों का तीनों लोकों में विस्तार है - लेकिन जब मन शुद्ध हुआ तो ज्ञान रूपी पुत्र उत्पन्न हुआ ।

शुद्ध मन में ज्ञान का प्रकाश हुआ और ज्ञानवृत्ति जागने पर मोह, माया, ममता, गर्व, पंचविकार, पंचक्लेश, त्रिताप आदि की निवृत्ति हो गई, मन का जितना मिथ्या साम्राज्य था वह सब नष्ट हो गया।

****

।। राग ज़िला भजन ।। ६ ।। ३१९।।

एक अचम्भा हमने देखा, आवत अचरज भारी रे।
मात पिता को सुत ने जनिया, जाया पूत कुंवारी रे ।।टेक।।
एक नगर भूमी बिन देखा, जामें रंग अपारी रे।
तासु नगर इक धाम न देखा, रहत बहुत नर नारी रे ।।१।।
अजा कसाई को गहि मारा, छुरी सीस तां डारी रे।
पकड़ बाज को चिड़िया मारा, मारी मूस मंझारी रे ।।२।।
पाहन तरते पानी माहीं, तूंबा डूबत धारी रे।
पानी बिन इक नौका चलती, अग्नी जारत वारी रे ।।३।।
पिंगला पर्वत ऊपर चढ़िया, ठूंठ बजावत तारी रे।
अन्धा देखहिं बहुरा सुनहैं, गूंगे बात उच्चारी रे ।।४।।

अर्थ इसी का जो जन जाने, सो विद्वान विचारी रे।

कहे टेऊँ वह मेरा स्वामी, तांको वन्द हमारी रे।।५।।

परम आदरणीय वन्दनीय आचार्य सद्‌गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज अपनी अमृततुल्य मृदुल एंव रहस्य से भरी वाणी में फरमाते हैं कि एक महा आश्चर्य हमने देखा जिसे देखकर बहुत विस्मय हुआ – मात पिता को सुत ने जनिया। माता पिता को पुत्र ने उत्पन्न किया – मन रूपी पुत्र ने ममता रूपी माता एवं गर्व रूपी पिता को उत्पन्न किया अर्थात् पहले मन हुआ तत्पश्चात् मन के अन्दर झूठी अहंता एवं ममता उत्पन्न हुई।

मन की माता ममता मारो
मन के बाप गर्व को गारो

ममता एवं अहंता मन में ही उत्पन्न हुई। ममता रूपी माता एवं अहंता रूपी पिता उस मलिन मन की ही उपज है।

जाया पूत कुंवारी रे –

परमात्मा के ध्यान सुमरण में लगने वाली ब्रह्ममय मनोवृत्ति से ज्ञान रूपीपुत्र उत्पन्न हुआ। जब मनोवृत्ति सांसारिक विषय विलासों से हटकर अन्तर्मुखी होती है तब हृदय में ज्ञान का प्रकाश होता है।

एक नगर भूमी बिन देखा, जामें रंग अपारी रे।

तासु नगर इक धाम न देखा, रहत बहुत नर नारी रे ।।

बिना भूमि के एक शहर बना हुआ है। मन के अन्दर एक नगर मिथ्या कल्पनाओं का बसा हुआ है जिसमें अनन्त रंग भरे पड़े

हैं – बिना घर (धाम) के ही अनन्त नर नारियों का उसमें निवास है। अनन्त संकल्पों कल्पनाओं का इस मन में निवास है।

अजा कसाई को गहि मारा।

बकरी ने कसाई को मार दिया। काल रूपी कसाई है। और मोक्ष कामी सद्‌वृति अजा है। उस सद्‌वृति ने ध्यान सुमरण, भजन करते हुए काल पर जीत प्राप्त कर ली।

छुरी सीस तां डारी रे.....

(तमेव विदित्वातिमृत्युमेति) मृत्यु से पार अर्थात् काल से पार वह जीव हो जाता है। जिसके अन्तर में सद्‌वृति जागती है।

पकड़ बाज को चिड़िया मारा–अहंकार रूपी बाज को विवेकवृत्ति रूपी चिड़िया ने मार दिया। विवेक सद्‌असद् का विचार उत्पन्न होने पर अहंकार विनष्ट हो गया। पहले अपने देह का अभिमान, धन आदि सांसारिक पदार्थों का अभिमान था लेकिन जब विवेकवृत्ति उत्पन्न हुई मिथ्या अभिमान रूपी बाज का नाश हो गया।

मारी मूस मंझारी रे ....

चूहे ने बिल्ली को मार दिया। सन्तोष रूपी चूहे ने लोभवृत्ति रूपी बिल्ली को मार दिया। सन्तोष उत्पन्न होने पर लोभ लालसा शान्त हो गई।

पाहन तरते पानी माहीं ....

पाहन–माने जड़ .....

जान बूझ जड़ हो रहे – बल तज निर्बल होय।

कह कबीर तां दास का – पल्ला न पकड़े कोय।।

हून्दे बलु निर्बल, सामी दिठा सन्त जन।
जनि मारे मन मवास खे, जीत्या पंजई दल।।
धरती ऐं आकास जी, रखिनि सारी कल।
कढी सभ खलल, नींवा चलनि नीर ज्यां।।

जो सब कुछ जानने के बाद ज्ञान प्राप्त करने के बाद भी जड़वत् रहता है निर अभिमानी होकर रहता है।

वह अभिमान शून्य जिज्ञासु तैरता है भव सागर में कभी डूबता नहीं लेकिन जो अहंकारी है अभिमानी है।

तूम्बा डूबत धारी रे

वह धारा में डूब जाता है – अहंकारी का नाश हो जाता है।

पानी बिन इक नौका चलती। संसार समुद्र भव सागर कहा गया है। बाहरी पानी जल वहां दृष्टि गोचर नहीं होता है। हृदय के अन्दर उस समुद्र का निवास है–आसक्ति रूपी जल है । मन के अन्दर रागद्वेष, हर्ष शोक अपना, पराया सुख दुख की भावनाएं कल्पनाएं ही बिना जल का समुद्र है। उस भव सागर से वही पार होता है जिसके पास सद्विचार रूपी नौका (नाव) है। बिना पानी वाले समुद्र (भव सिन्धु) में नाम एवं सद्विचार रूपी नौका चलती है। वही इस जीव को भव सागर से पार कराती है।

अग्नि जारत वारी रे

अग्नि पानी को जला रही है। पानी के समान शीतल निर्मल स्वभाव वाला जीव मिथ्या मोह माया के वश में होकर कामनाओं की अग्नि में जल रहा है। इस जीव में दुख का लेश मात्र भी नहीं–सहज सुख राशी यह जीव–सहज शीतल है लेकिन चाह,

इच्छाओं रूपी अग्नि इसे जला रही है।

पिंगला पर्वत ऊपर चढ़िया, ठूंठ बजावत तारी रे।
अन्धा देखहिं बहुरा सुनहैं, गूंगे बात उच्चारी रे ।।

पहला अर्थ – गूंगे बात उच्चारी –

गूंगा है पुस्तक – पुस्तक बोल नहीं पाता लेकिन पुस्तक में वर्णन पढ़ते पढ़ते – पढ़ने वाला पुस्तक में बताए दृश्यों का हृदय में अनुभव करता है। मान लो कैलाश पर्वत का सजीव वर्णन किसी ग्रन्थ पुस्तक में दिया हुआ है तो तन्मयता के साथ पढ़ने वाला पाठक बैठा अपने घर में है लेकिन ऐसा अनुभव करता है कि मैं प्रत्यक्ष कैलाश पर्वत को देख रहा हूं, पर्वत पर चढ़ रहा हूं – पवित्र मानसरोवर में पक्षियों का कलरव सुन रहा हूं और पवित्र दृश्य देखकर हृदय उल्लासित हो रहा है तालियां बज रही है।

दूसरा अर्थ है :–

ज्ञानी ज्ञान के द्वारा एवं योगी योगकला के दशम द्वार में अपनी वृत्ति स्थिर करके उस अमर देश में पहुंचते है :–

'' अगम देश को आतम ज्ञानी, पांव बिना चल जाते हैं
नैन बिना ही रूप निहारत, कर बिन कर्म कमाते हैं
कान बिना आवाज सुनत है, बिन जिव्हा गुन गाते हैं
नाक बिना सुगंधी को सूंघत, कह टेऊँ सुख पाते हैं।

कवितावली छन्दावली–78

बिना नैनों के उस परंतत्व के दर्शन, बिना कानों के अनहद नाद का श्रवण, बिना पांवों के वहां पहुंचते हैं, बिना वाणी के अन्तर में ही उसके गुण गाते हैं, बिना हाथ के ताली बजाते हैं।

शरीर की बाहरी इन्द्रियों की वहां पर पहुंच नहीं। गहन

ध्यान की अवस्था में बिना बाहरी इन्द्रियों की सहायता के श्रवण, दर्शन, कथन आदि हो जाता है।

अर्थ इसी का जो जन जाने, सो विद्वान विचारी रे।
कहे टेऊँ वह मेरा स्वामी, तांको वन्द हमारी रे।।

इसका अर्थ जो समझता है, वह विद्वान है, ज्ञानवान है, मैं उसे नमस्कार करता हूं वह मेरा स्वामी है।

परम ज्ञानवान गुरुदेव अपनी अमृत समान वाणी में फर्माते हैं कि इस पद का अर्थ जो जानता है - वह विचारवान और विद्वत्भूषण है - वह मेरा स्वामी पूज्यनीय है-उसको मेरी वन्दना है।

****

।। राग ज़िला भजन ।। ७ ।। ३२०।।

गगन मण्डल में अजब तमाशा,देखत मैं विस्माया रे।।टेक।।
धरती बिन इक नगर नवीना, नज़र हमारी आया रे।
प्रजा बिन वां इक भूपति ने, अपना हुक्म चलाया रे ।।१।।
सीस बिना वां इक माली ने, बिन जल बाग बनाया रे।
डार तले जिस ऊपर मूला, ऐसे बिरछ लगाया रे ।।२।।
पांव बिना तहँ नटनी नाचे, अन्ध देख हर्षाया रे।
मुख बिन मीठे गाने गाकर, बहुरे लोक लुभाया रे ।।३।।
नीर बिना इक सागर में वां, बहुत लोक बह जाया रे।
बादल बिन जल बरसत है वां, निश में सूर समाया रे ।।४।।
कहे टेऊँ गुरु कृपा करके, ऐसा देश दिखाया रे।
देश उसी को जिसने देखा, सो मुनियों का राया रे ।।५।।

आकाश मण्डल में एक अद्भुत विस्मय कारक (खेल) दृश्य देखकर मैं अत्यन्त विस्मित हूं। यह शरीर रूपी नगरी जिसमें मनबृद्धि आदि अन्तःकरण चतुष्टय एवं पंच कर्मेन्द्रियों पंच ज्ञानेन्द्रियों सैकड़ो नाड़ियों का निवास है।

इस शरीर रूपी नगरी में मन रूपी राजा सब इन्द्रियादिकों पर अपना हुकम चलाता है

सीस बिना वां इक माली ने, बिन जल बाग बनाया रे।
डार तले जिस ऊपर मूला, ऐसे बिरछ लगाया रे ।।

निर्गुण निराकार ब्रह्म जो बिना सिर के माली के समान है उसके संकल्प से यह सृष्टि रूपी बगीचा बना। जिसमें यह शरीर रूपी वृक्ष हैं जिसकी जड़ मूल (सिर) ऊपर एवं शाखाएं (अन्य इन्द्रियां) हाथ पांव इत्यादि नीचे की ओर हैं :-

प्रकृति (माया) रूपी नटनी - चारों ओर नृत्य कर रही है । अन्ध-जिसे ज्ञान रूपी नेत्र नहीं ऐसे अज्ञानी जीव उस माया के खेल देख देखकर हर्षित हो रहे हैं। वह माया बिना मुख के ही मीठे मीठे गाने गाकर-अर्थात् शब्द स्पर्शादि अनन्त प्रलोभनों के द्वारा अनन्त लोक समुदायों को लुभा रही है।

नीर बिना इक सागर में वां, बहुत लोक बह जाया रे।
बादल बिन जल बरसत है वां, निश में सूर समाया रे ।।

बिना पानी के इस सागर-संसार सागर में अनन्त जीव माया के प्रवाह में बह रहे हैं। बादल कि - माया में बहते हुए जीव, आंखों के आंसुओं के बिना बादल बरसात बरसा रहे हैं अर्थात् रो रहे हैं, उनके विवेक का सूर्य मोह की रात्रि में लुप्त होता जाता है, लेकिन

जो ज्ञानी आप्त पुरुष हैं वे ध्यानादि द्वारा बिना बादल के बरसने वाले जल-दशमद्वार सहस्रार में सुरति चढ़ाकर उस अमृत का पान करते हैं। वहां अज्ञानावस्था रूपी रात्रि में ज्ञान का सूर्य चमकता है। अर्थात् मोहआच्छादित अज्ञानावस्था रूपी रात्रि को ज्ञान रूपी सूर्य के द्वारा वे योगी पुरूष दूर कर लेते हैं - आचार्य जी फरमाते हैं कि सद्गुरुदेव ने कृपा करके ऐसा देश दिखा दिया है उस देश को जिसने देखा वह मुनियों में श्रेष्ठ है।

****

।। राग तिलंग भजन ।। ३७ ।। ४०१।।

मैं गुरु का दर्शन देखा, सब वार दिया यम लेखा ।।टेक।।

लड़का देके लड़की लीनी, लड़की ने लय सृष्टी कीनी।
ब्रह्मानन्द में वृत्ती भीनी, कछु रूप रहा ना रेखा ।।१।।
पहली नारी घर से भागी, दूजी नारी जब उठ जागी।
लड़का लड़की जनने लागी, मन आनन्द भया विशेखा ।।२।।
बिना सूत के डोर चढ़ाया, बिना भूमि के नगर बसाया।
थिर कर आसन ताहिं जमाया, जहँ द्वैत नहीं कछु पेखा ।।३।।
कहे टेऊँ सब कारज होया, अपने घर में सुख से सोया।
जन्म मरण दुख को मैं खोया, अब मीम रही ना मेखा ।।४।।

अपनी अमृत तुल्य अनुभवी वाणी में आचार्य सद्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज सदुपदेश देते हुए कहते हैं कि गुरुदर्शन का अमोघ फल है उनके दर्शन करने मात्र से यमराज के सभी खाते बन्द हो गए। पाप-पुण्य से ऊपर उठकर परम आनन्द में मन विलीन हो गया।

मलिन मन रूपी लड़का देकर ब्रह्ममयी मनोवृत्ति रूपी लड़की ली। अर्थात् मन के अशुभ विचार एवं मलिनता को त्यागकर शुभ्र सात्विक वृत्ति का उदय हुआ । वह वृत्ति जब पारब्रह्म से एकाकार हो गयी तो नाम रूपात्मक प्रपंचात्मक सृष्टि संसार का लय हो गया। सत्य स्वरूप में वृत्ति टिक जाने पर असत् दुख जड़ रूप संसार विलीन हो गया। उस ब्रह्म स्वरूपानन्द में वृत्ति मगन हो गयी। नाना रूप संसार विलुप्त हो गया।

पहली नारी घर से भागी, दूजी नारी जब उठ जागी।
लड़का लड़की जनने लागी, मन आनन्द भया विशेखा ।।

पहली नारी अर्थात् अविद्या रूपी नारी घर से भाग गई अर्थात् अविद्या अन्धकार की निवृत्ति हो गयी दूसरी नारी ..... अर्थात् विद्या ज्ञान रूपी नारी जागी। अर्थात् ज्ञान की प्राप्ति हुई - ज्ञान से परम शान्ति, धैर्य, सन्तोष, आनन्द, समरसता, समता, आदि लड़के लड़कियां उत्पन्न हुए-और परमआनन्द की प्राप्ति हुई। चाहना इच्छा तृष्णा आदि की समाप्ति हो गई इच्छाएं निवृत्त हुई तो शान्ति की प्राप्ति हुई।

बिना सूत के डोर चढ़ाया, बिना भूमि के नगर बसाया।
थिर कर आसन ताहिं जमाया, जहँ द्वैत नहीं कछु पेखा ।।

एकाग्र मन के द्वारा नाम स्मरण आदि साधन करके अपनी वृत्ति को दशमद्वार तक पहुंचा दिया।

अष्टकमल पर आसन कीया।

अमर देश को देख सु लीया।

पाया दिव्य दीदारा, अगम अपारा।।

वहां अमर देश है जहां पहुंचने पर मृत्यु का भय नहीं रहता। वहां पर अपनी वृत्ति को स्थिर कर लिया अर्थात् आसन जमा लिया वहां पर दो नहीं केवल एक ही बचता है।

सत्गुरु देव जी फर्माते हैं कि इस स्थिति को प्राप्त करने के बाद और कुछ पाना शेष नहीं रहता।

वह पूर्णकाम आप्तकाम हो जाता है। अपने आतम रूपी घर में पहुंचकर परमसुख की प्राप्ति उसको होती है। जन्ममृत्यु आवागमन के बन्धन से वो मुक्त हो जाता है कोई कमी कोई दुखकष्ट क्लेश बाकी नहीं रहता।

****

।। राग पूरब भजन ।। ६ ।। ५९७।।

गुरु की कृपा से जिज्ञासू, सिन्धु सुता पति जोवे है ।। टेक।।
धरनि सुता पति के जपते ही, सूर पूत भय खोवे है ।।१।।
सागर सुत का सुत उर उपजे, अर्जुन सुत तब सोवे है ।।२।।
गिरि कन्या पति के दर्शन से, हरि सुत मृतक होवे है ।।३।।
कहे टेऊँ जो यह पद समझे, सो दुर्मति को धोवे है ।।४।।

अपनी अनुभवी अमृतानन्द से भरी हुई वाणी में परम श्रद्धेय आचार्य सद्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज फरमाते हैं कि गुरुदेव की परम कृपा से यह जिज्ञासु (सिन्धु सुता) लक्ष्मी –सागर मन्थन से जो नवरत्न निकले उनमें लक्ष्मी जी भी एक है इसलिए उनका नाम हुआ सिन्धु सुता। उनके पति हैं श्री भगवान नारायण जी। भावार्थ यह है कि गुरुकृपा से ही परमात्मा की प्राप्ति होती है :-

धरनि सुता पति के जपते ही, सूर पूत भय खोवे है ।।

धरनी अर्थात् धरती की सुता (पुत्री) हैं माता सीता जी- उनकी उत्पति धरती से हुई है-उनके पति स्वामी हैं भगवान राम - राम नाम का जाप करने से सूर पूत अर्थात् सूर्य भगवान के पुत्र यमराज का भय निवृत हो जाता है। भावार्थ यह है कि राम नाम का जाप करने से मृत्यु का भय निवृत हो जाता है।

सागर सुत का सुत उर उपजे, अर्जुन सुत तब सोवे है ।।

सागर सुत-समुद्र मन्थन से चन्द्रमा भी निकले थे इसलिए यहां सागर-सुत का अर्थ है "चन्द्रमा"

सागर सुत का सुत - अर्थात् चन्द्रमा का पुत्र है बुध - पवित्र बुद्धि के उदय होने से

अर्जुन सुत - अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु - सोवे है अर्थात् पवित्र बुद्धि प्रज्ञा के उत्पन्न होने पर मिथ्या अभिमान विलुप्त हो जाता है।

गिरि कन्या पति के दर्शन से, हरि सुत मृतक होवे है ।।

गिरि कन्या - अर्थात् पर्वत की पुत्री पार्वती जी के पति शंकर भगवान के दर्शन करने से हरि सुत-अर्थात् कामदेव (मृतक होवे है) नष्ट हो जाता है।

शिव भगवान के ध्यान सुमरण एवं भक्ती करने वाले के मन पर कामदेव का प्रभाव नहीं होता है।

सत्गुरु महाराज जी भजन के आखिरी पंक्ति में फरमाते हैं कि जो इस पद के अर्थ को समझता है उसकी मन से दुर्मति कुमति दूर हो जाती है।

****

।। राग आसा भजन ।। ६८ ।। १३०।।

रस पान पान पान करो।

अन्तर्मुख अभ्यास करे तुम, आतम का रस पान करो ।। टेक।।
अन्तर्मुख हो गोता मारे, निज घर में निज वृत्ती धारे।
फुरनों से मन को निर्वारे, छिन छिन में सावधान करो ।।१।।
गगन मण्डल में कूप निराला, अमृत है तिस माहिं रसाला।
भर भर पीके अमर प्याला, तांका दिल में ध्यान करो ।।२।।
स्वास स्वास में शब्द बिराजे, सब घट सोय अनाहत बाजे।
ताहिं सुनत सिर काल न गाजे, गुरु संग तिहं पहिचान करो।।३।।
नैन नगर से वृत्ति उठाये, सत्य लोक में ताहिं टिकाये।
कहे टेऊँ सब दूख मिटाये, अमरापुर स्थान करो ।।४।।

अपनी अमृतमयीवाणी में परम श्रद्धेय आचार्य सद्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज सदुपदेश देते हैं कि - हे जिज्ञासु अपनी वृत्ति को ब्राह्य दृश्य प्रपंचात्मक संसार से हटाकर अन्तर्मुख- अपने आत्म स्वरूप का ध्यानाभ्यास करते हुए-अमृत रस का पान करो -

अपने मन को अपने अन्तर में ले जाकर जो तुम्हारा आत्म स्वरूप निज घर है वहां पर अपनी वृत्ति को एकाग्र करो -

वृत्ती को एकाग्र करने में विध्न डालने वाले मन के संकल्प फुरनों को निवृत्त करके प्रत्येक क्षण सावधान रहो।

गगन मण्डल में कूप निराला, अमृत है तिस माहिं रसाला।

दशमद्वार गगन मण्डल है वहां पर अमृत का कुआं है योगी सत्पुरुष अपने मन की वृत्ति को एकाग्र करके दशमेद्वार में ध्यान

लगाते हैं – और अमृत पान करते हैं – उसी का ध्यान करने के लिए सत्‌गुरु महाराज जी निर्दिष्ट कर रहे हैं –

सत्‌गुरु का दिया हुआ नाम – स्वास स्वास में विराजमान है। श्वास प्रश्वास अर्थात् स्वास लेना, स्वास छोड़ना इस क्रिया में गुरुमंत्र समाया हुआ है यह शब्द अनाहत–अर्थात् बिना किसी चोट के उत्पन्न होने वाला है। अपने चित्तवृतियों को एकाग्र करके निरंतर अभ्यास द्वारा वह शब्द सुना जाता है और जिसने वह शब्द सुन लिया वह काल से अतीत, मृत्यु से परे हो जाता है, गुरु उपदिष्ट विधि से जप करने से वह मार्ग लभ्य हो जाता है।

नैन नगर से वृत्ति उठाये, सत्य लोक में ताहिं टिकाये।
कहे टेऊँ सब दूख मिटाये, अमरापुर स्थान करो ।।

दृश्यात्मक जगत से मन को हटाकर अन्तर्मुख बनाकर सत्य लोक, अपने आत्म स्वरूप में मन को टिकाना है।

सुरति लगे गुरु शब्द में –मन मूरत के माहिं।
कह टेऊँ तिस दास को, जमपुर का दुख नाहिं।।

ऐसा जिसने दृढ़ अभ्यास कर लिया उसे अमरापुर स्थान अर्थात् अमरता प्राप्त होती है, उसके जन्म मृत्यु के समस्त बन्धन कट जाते हैं।

<u>दोहावली –</u>

पांच पांच तज पांच को – हरे तीन इक जीत।
कह टेऊँ सो सन्त है – जांकी हरि से प्रीत।।307।।

उक्त दोहे में सत्गुरु महाराज जी फरमाते हैं कि पांच क्लेश–

1 अविद्या	2 अस्मिता	3 राग
4 द्वेष	5 अभिनिवेश	

<u>पञ्चविकार</u>

1 काम	2 क्रोध	3 लोभ
4 मोह	5 अहंकार	

पांच भेद

1 जीवजीव	2 जीवजड़	3जीवईश्वर
4 जड़ जड़	5 जड़ ईश्वर	

इन सबका जो त्याग करता है एंव (हरे तीन) तीनों तापों

1 आधि	2 व्याधि	3 उपाधि

और इक जीत – अर्थात् मन पर जो जीत प्राप्त कर लेता है एवं प्रभु परमात्मा से जिसके मन की तार जुड़ जाती है वही वास्तव में संत है।

****

वचन षष्ठ प्रकार का कहते संत सुजान।
कह टेऊँ लख मरम जो, पावे सो नर ज्ञान ।।388।।

आचार्य जी फरमाते हैं कि वचन छः प्रकार के होते हैं

1) खाली रोचक	4) यथार्थ रोचक
2) खाली भयानक	5) यथार्थ भयानक

3) पर्दे में यथार्थ 6) बिना पर्दे यथार्थ

1) खाली रोचक - रुचिकर प्रिय वचन पर जिसमें कोई शिक्षा या उपदेश न हो।

2) यथार्थ रोचक - वचन रुचिकर एवं शिक्षाप्रद

3) भयानक - भय उत्पन्न करने वाले वचन शिक्षा रहित

4) यथार्थ भयानक - भय उत्पन्न करने वाले वचन-शिक्षाप्रद

5) यथार्थ पर्दे में - सत्य वचन - जीवात्मएक्य बोधक वचन- परन्तु पर्दे के अन्दर अर्थात् संकेतात्मक

6) यथार्थ बिना पर्दे - ब्रह्मात्म एकता के बोधक वचन बिना पर्दे के सीधी भाषा में।

इन सब वचनों का मरम जो जानता है वही सच्चा ज्ञानी है।

****

नाम चतुर गुन तीन युत, त्रिगुण भागकर दोय।
कह टेऊँ रह शेष जो, अविनाशी है सोय।।958।।

उक्त दोहे का अर्थ निम्न है :-

नाम - कोई भी नाम

उदाहरणार्थ - राम

राम में दो अक्षर है -

चतुर गुण - अर्थात् राम के दो अक्षर है - उन दो को चतुरगुण चार से गुणा करो

2 x 4 = 8

ये हुए आठ

तीन युत - उसमें तीन जोड़ें

आठ + तीन = ग्यारह

त्रिगुण - उसे तीन से गुणा करें

11 x 3 = 33

ग्यारह x तीन = तैंतीस

भाग कर दोय

इस तैंतीस संख्या के दो भाग करें

33 के दो भाग

सोलह + सोलह = 32

तैंतीस में से बत्तीस गए

33 – 32 = 1

कह टेऊँ रह शेष जो अविनाशी है सोय।

वह एक ही अविनाशी ईश्वर है।।

****

नाम त्रिगुन पुन तीन युत वसुगुण भागा चार

कह टेऊँ जो शेष रह सो जग रूप विचार।।959।।

नाम - कोई भी नाम जैसे माधव

माधव में तीन अक्षर है

त्रिगुन - तीन से गुणा

3 x 3 = 9

पुनि तीन युत तीन जोड़ें

9 + 3 = 12

वसुगुण - वसु 8 होते हैं

वसुगुण - 8 से गुणा करें

12 x 8 = 96

भागा चार - चार भाग करें

24 - 24 - 24 - 24 = 96

बाकी बचा शून्य ज़ीरो

कह टेऊँ जो शेष रह सो जगरूप विचार–

शेष बचा शून्य – अर्थात् जगत भी शून्य है मिथ्या है – भासता है पर वास्तव में असत् मिथ्या है।

****

नाम चतुरगुण एक युत त्रिगुण भागा चार।
कह टेऊँ जो शेष रह, जग कारक वीचार।।960।।

नाम – कोई भी नाम

यथा दामोदर – चार अक्षर

चतुर गुण – चार से गुणा करें

4 x 4 = 16

एक युत – एक जोड़ें

16+1 = 17

त्रिगुण – तीन से गुणा करें

17 x 3 = 51

भागा चार – चार भाग करें

51 ÷ 4 =

4) 51 (12
4
11
8
3 शेष

बचे तीन

कह टेऊँ जो शेष रह जग कारक वीचार

जो शेष बचा तीन अर्थात् तीन गुण

सत्त्व, रज, तम – ये तीनों गुण संसार के कारक अर्थात् तीनों गुणों से संसार का निर्माण हुआ है।

****

शहल बाज़ को चिड़िया ले गई, जहां न धरनि अकासा जी।
बैठ वहां पुनि तांको खाया, मिट गई भूख प्यासा जी।
फेर आयकर अपने घर में, निर्भय किया निवासा जी।
कहे टेऊँ अति आनन्द पाया, हृदय भया हुलासा जी।।132।।

शहलबाज अर्थात् अहंकार देहाध्यास धारण करने वाले मलिन मन को ब्रह्माकार वृत्ति रूपी चिड़िया अपने आत्म स्वरूप की स्थिति रूपी मंजिल पर ले गई (वहां बैठ पुनि) मन के सभी फुरनों का नाश कर दिया और सांसारिक इच्छाओं रूपी भूख प्यास को हमेशा के लिए मिटा दिया। अपने आत्म स्वरूप में स्थित होकर परम निर्भयता को प्राप्त किया।परमानन्द की प्राप्ति हुई– हृदय उल्लासित हो गया।

एक अचम्भा बन में देखा, देखत ही विस्माय रहा।
मूसे बबर शेर को पकड़ा, रो रो सिंह चिलाय रहा।
छुटना चाहत छूटत नाहीं, बार बार अकुलाय रहा।
कहे टेऊँ वह भूल भ्रम में, महा कष्ट को पाय रहा।।133।।

सद्गुरुदेव जी फरमाते हैं कि एक बार जंगल में महाआश्चर्य देखा – अत्यंत विस्मित करने वाला वो दृश्य था। चूहे ने शक्तिशाली बब्बर शेर को पकड़ा उसकी पकड़ में आकर सिंह आर्तनाद करने लगा। उस सिंह ने चूहे की पकड़ से छूटने के बहुत ही प्रयत्न किये परन्तु कामयाब नहीं हो सका। भावार्थ यह कि बबर शेर रूपी यह जीव है जो वास्तव में परमात्मा का अंश होने से अत्यंत शक्तिवान है इसको मोह अज्ञान रूपी चूहे ने पकड़ लिया है। अज्ञान के कारण अपने को बद्ध एवं दुखी मानता है अनन्त प्रयत्न करने के बाद भी इस अज्ञान मोह के चंगुल से छूट नहीं पाता।

अनन्त भ्रम संशयों में बन्धा हुआ अज्ञानी जीव बहुत कष्टों को पाता है।

मोह सकल व्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि हपजहिं बहु सूला।।
सो माया बस भयह गुसांई, बन्ध्यो कीर मर्कट की न्याईं ।।

सोलह शिक्षाऐं

दोहा: सोलह शिक्षायें सुनो, सुखदायक हैं जोय।
कह टेऊँ संकट कटे, देत परम गति सोय॥

१. आदि फल वीचार के तुम, कर पीछे सब काम जी।
ये वचन मन मांहि धारे, पाय सुख आराम जी॥

२. उद्यम कर शुभ कर्म कारण, सीख येही सार है।
भाग पर कछु नाहिं राखो, वेद ग्रन्थ पुकार है॥

३. समय का अति कदर करना, खोइये न कुसंग में।
जो बचे व्यवहार से, सो सफल कर सत्संग में॥

४. सर्व सेतुम गुण उठाओ, दोष दृष्टी कोहरे।
देख अवगुन आपना, जो बहुत हैं मन में भरे॥

५. सर्व जीवों से करो हित, निन्द किसकी ना करो।
ना बुरा चाहो किसी का, भाव शुद्ध हृदय धरो॥

६. जीव किस कोना दुखाओ, दया सब पर कीजिये।
राम व्यापक जान सब में, द्वेष कोहर लीजिये॥

७. समय जोई गुज़र जावे, याद ना तुम ताहिं कर।
आने वाले वक्त की भी, चिन्त मन में नाहिं कर॥

८. जो बनावे ईश्वर तुम, ताहिं पर राज़ी रहो।
जा बनी सा है भली सब, यों सदा मुख से कहो॥

९. आपने स्वारथ लिये तुम, झूठ ना कब बोलना।
वचन साचा मधुर हो जब, तबहिं मुख को खोलना॥

१०. शरण तेरी आय जोई ताहिं दे सन्मान जी।
यद्यपि वैरी होय तोभी, ना करो अपमान जी॥

११. और का उपकार कर तुम, छोड़ स्वारथ आपना
लोक पुनि परलोक में कब, होय तुम कोताप ना।

१२. धर्म अपने मांहि हरदम, प्यार कर नटना नहीं।
सीस जावे जान दें पर, धर्म से हटना नहीं॥

१३. मौत अपना याद कर ले, तिहं भुलावो ना कभी।
जान मन में मरण का दिन, निकट आया है अभी॥

१४. धर्मशाला जान जग को, जीव सब महिमान है।
मोह किस सेना करो, सब स्वप्न सम सामान है॥

१५. वेद गुरु के वचन पर नित, तुम करो विश्वास जी।
अटल श्रद्धा धार मन में, भ्रम कर सब नास जी॥

१६. आदि मन्तर ले गुरू से, जाप जप धर ध्यान को।
जगत बन्धन तोड़ विचरो, पाय आतम ज्ञान को॥

दोहा: ये शिक्षायें याद कर, मन में पुनि वीचार।
कह टेऊँ करनी करे, भव निधि उतरो पार॥

आचार्य सद्‌गुरु टेऊँराम जी महाराज

आरती

ॐ जय गुरु टेऊँराम, स्वामी जय गुरु टेऊँराम।।
पर उपकारी जगत उद्धारी, तुम हो पूरन काम ।।ॐ।।
जब जब प्रेमिनि निज हित कारण, तुमको पूकारा ।।स्वामी।।
तब तब गुरु अवतार धरे तुम, सबको निस्तारा ।।ॐ।।
प्रेम प्रकाशी मण्डलाचार्य, मंत्र साक्षी सत्‌नाम ।।स्वामी।।
धर्म सनातन के प्रचारक, नीति निपुण अभिराम ।।ॐ।।
देश विदेश में मण्डली लेकर, पावन दे उपदेश ।।स्वामी।।
आत्म रूप लखाया सबको, हरिया ताप क्लेश ।।ॐ।।
पूरण अचल समाधी तेरी, सिद्ध आसन ब्राजे ।।स्वामी।।
रूप मनोहर सुन्दर लोचन, देखत मन गाजे ।।ॐ।।
आत्म स्थित वचन के पूरे, योगी इन्द्रिय जती ।।स्वामी।।
परम उदारी धीरज धारी, परम अगाध मती ।।ॐ।।
धन धन मात पिता कुल तेरा, धन तव साधु सुजान।।स्वामी।।
धन वह देश जहाँ तुम जन्मिया, धन तव शुभ स्थान ।।ॐ।।
सुर नर मुनि जन हरिजन गुनिजन, गावत गुन तुम्हरे।।स्वामी।।
अंत न पाइ सके नर कोई, महिमा अपर परे ।।ॐ।।
जो जन तुम्हरी आरति गावे, पावे सो मुक्ती ।।स्वामी।।
साध संगति को हरदम दीजे, पूरण गुरु भक्ती ।।ॐ।।

छन्द

सर्व स्वरूपं आदि अनूपं, भूमि भूपं भयभाना।
अन्त न ऊपं छाय न धूपं, काढत कूपं धर ध्याना।
रहस्यारामं दायक धामं, नित निष्कामं निर्बानी।
पाद नमामं निशदिन शामं, श्री टेऊँराम गुरु ज्ञानी।
चावल चन्दन कुंगूं केसर, फूलों की वरखा बरसाओ।
नृसिंह गोमुख भेरी बाजा, तबला सुरन्दा झांझ बजाओ।
भर भर दीपक पूर्ण घी से, अगरबत्ती अरु धूप जलाओ।
आरति साज करो बहु सुन्दर, सद्गुरु की जयकार बुलाओ।

पल्लव

आशवंदी गुर तो दरि आई, तुम बिन ठौर न काई।
तूं हरि दाता तूं हरि माता, मेरी आश पुजाईं।
पाइ पल्लउ मैं पेर पियादी, आयसि हेत मंझाई।
तन मन धन अर्दास करे मैं, मांगत नामु सनेही।
नामु तुम्हारा साबुन करिसां, धोसां पाप सभेई।
कहे टेऊँ गुर लोक तीन में, आवागमन मिटाईं।

पल्लव

पलउ जे पाइन, दाता तुंहिंजे दर ते।
दाता दर आयनि जा, अर्ज ओनाईं।
मिड़ई तिनि जे तन मन जा, दुखड़ा मिटाईं।
आसूं अघाईं, आसू आस वन्दनि जूं।
जो जन आ गुरु शरण में, बैठ करे अर्दास।
कहे टेऊँ तिस दास की, पूरण करिये आस।
दुख सर्व ही दूर हो, लगे न यम की त्रास।
कारज होवन रास, संशय कोई ना रहे।